हिन्दी गौरव-ग्रथमाला—३९ वाँ ग्रथ

नीहार

श्री महादेवी वर्मा,
बी० ए०

प्रकाशक
गाँधी हिन्दी-पुस्तक भंडार
प्रयाग

प्रकाशक—
गाँधी-हिन्दी-पुस्तक भंडार
प्रयाग

प्रथमावृत्ति—एक हजार
मूल्य—१।)

मुद्रक—
सूरजप्रसाद खन्ना
हिन्दी-साहित्य प्रेस प्रयाग।

परिचय

आजकल जिसे छाया-वाद कहते हैं, इस ग्रथ की अधिकाश कविताये उसी ढग की है। छायावाद किसे कहते है? उसे छायावाद कहना चाहिये अथवा रहस्य-वाद यह वाद-ग्रस्त-विषय है। स्वय छायावादी-कवि अब तक इस बात को निश्चित नही कर सके, कि वे अपनी नूतन-प्रणाली की कविताओ को छाया-वाद कहे अथवा रहस्य-वाद। इस प्रकार की कविताओ की परिधि इतनी विस्तृत हो गई है कि उन सब का अन्तर्भाव छाया वाद अथवा रहस्य-वाद मे नही हो सकता। अतएव कोई कोई उसको हृदय वाद कहने लगे है, किन्तु यह सज्ञा अति-व्याप्ति दोष से दूषित है। मिसटिसिज्म (Mysticism) का यथार्थ-अनुवाद रहस्य-वाद ही हो सकता है, छाया-वाद शब्द मे उसकी छाया दिखला पडती है, मूर्ति नहीं। रहस्य-वाद मे अस्पष्टता, अपरिच्छिन्नता और सर्व साधारण की दुर्बोधता झलकती है, वह चमत्कारक होकर अचिन्तनीय भी है, छाया-वाद मे यह बात नही पाई जाती। वह स्निग्ध, मनोरम, और प्राञ्जल है, साथ ही उतना अचिन्तनीय नही, शायद इसीलिये उस पर अधिक-तर-सहृदयो की स्वीकृति की मुहर लग गई है। छाया-

वाद शब्द प्रचलित हो गया है, और अपने उद्देश की पूर्ति भी कर रहा है। ऐसी अवस्था मे अब इस विषय मे अधिक इद कुत की आवश्यकता नही जान पडती। किसी विषय के लिये जब कोई शब्द रूढि हो जाता है, तो एक प्रकार से वह अपेक्षित-आवश्यकता के लिये स्वीकृत समझा जाता है, फिर वादविवाद क्या? ससार मे अधिकाश नाम करण इसी प्रकार हुआ है।

हिन्दी-कविता-क्षेत्र मे आजकल छाया-वाद की कविताये इस अधिकता से हो रही है, और युवक-दल उसकी ओर इतना आकृष्ट है कि वर्त्तमान समय को हम छाया वाद-युग कह सकते है। फिर भी छाया वाद की कविताये अभी आदिम-अवस्था मे है, उद्गम से बाहर निकलती हुई, अधिकाश-सरिताओ के समान उनमे वेग है, प्रवाह है, उल्लास और कल्लोल है, किन्तु बाछित धीरता नही, वह स्थान स्थान पर तरगाकुल और आविल भी है। ऐसा होना स्वाभाविक है, काल पाकर उनको समधरातल भी मिलेगा, और उस समय वे मजु-मथर-गामिनी और यथेच्छ स्वच्छ तामयी एव सरसा होगी। कवि-कार्य सुगम नही, वह अगम्य है, वह सर्वथा निर्दोष नही हो सकता। जब महाकवियो मे भी भ्रम, प्रमाद, और त्रुटियाँ पाई जाती है, तो उस पर बात बात में उँगली उठाना क्या उचित होगा, जिसने अभी कविता क्षेत्र मे

पदार्पण किया है। प्रेम से दोष प्रक्षालन के लिये किसी को सतर्क करना अवाछनीय नही, किन्तु ऐसे अवसरो पर मच्छिका-प्रवृत्ति से काम लेना सगत नही। थोडे समय मे भी कतिपय-छायावादी कवियो ने हिन्दी-ससार मे कीर्ति अर्जन की है, और उनमे पर्याप्त भावुकता का विकास देखा गया है। उन्होने अपने गहन-पथ को सरल बनाया है, और कोमल-कान्त-पदावली पर अधिकार कर के बडी भावमयी कविताये की है। उन्ही मे से एक श्रीमती महादेवी वर्मा कवयित्री भी है।

यह ग्रथ उनका आदिम-ग्रथ है, फिर भी इसमे उनकी प्रतिभा का विलक्षण विकास देखा जाता है। ग्रथ सर्वथा निर्दोष नही, किन्तु इसमे अनेक इतनी सजीव और सुन्दर पक्तिया है, कि उनके मधुर प्रवाह मे उधर दृष्टि जाती ही नही। प्रफुल्ल पाटल प्रसून मे काटे होते है, हो, किन्तु उसकी प्रफुल्लता और मनोरजकता ही मुग्धकारिता की सम्पत्ति है। ऐसा कहकर मै नियमन की अवहेलना नही करता हूँ—सहृदयता का नेत्रोन्मीलन कर रहा हूँ। कहा जा सकता है, एक स्त्री का उत्साह वर्द्धन करने के लिए बाते कही गई। मै कहूँगा यह विचार समीचीन नही, ऐसा कहना स्त्री जाति की सर्वतोमुखी प्रतिभा को लाञ्छित करना है। वास्तव मे बात यह है कि ग्रथ की

भावुकता और मार्मिकता उल्लेखनीय है, उसका कोमल शब्द बिन्यास भी अल्प आकर्षक नही ।

मैं श्रीमती महादेवी वर्मा का हिन्दी-साहित्य क्षेत्र मे सादर अभिनन्दन करता हूँ, और उनसे यह विनय भी, कि उनकी हृत्तन्त्री के अपूर्व झङ्कार मे भारतमाता के कण्ठ की वर्त्तमान ध्वनि भी श्रुत होनी चाहिये, इससे उनकी कीर्ति उज्ज्वल से उज्ज्वलतर होगी। माता की व्यथाओं के अनुभव करने की मार्मिकता मातृत्व पद की अधिकारिणी को ही यथातथ्य हो सकती है ।

काशीधाम
२८ ४-३०

हरिऔध

सूची

		पृष्ठ
विसर्जन	-	१
मिलन	-	३
अतिथि से	-	६
मिटने का खेल	-	७
संसार	-	९

पृष्ठ

अधिकार	-	१२
कौन	-	१४
मेरा राज्य	-	१५
चाह	-	१९
सूनापन	-	२१
संदेह	-	२४
निर्वाण	-	२६
समाधि के दीप से	-	२८
अभिमान	-	३०
उस पार	-	३३
मेरी साध	-	३७
स्वप्न	-	४०
आना	-	४२
निश्चय	-	४४

पृष्ठ

अनुरोध	-	४७
तब	-	४९
मुर्झाया फूल	-	५१
कहाँ	-	५५
उत्तर	-	५६
फिर एक बार	-	५९
उनका प्यार	-	६१
आँसू	-	६४
मेरा एकान्त	-	६५
उनसे	-	६८
मेरा जीवन	-	७०
सूना सदेश	-	७४
प्रतीक्षा	-	७६
विस्मृति	-	८०

पृष्ठ

अनन्त की ओर	-	८३
स्मारक	-	८४
मोल	-	८७
दीप	-	८९
वरदान	-	९१
स्मृति	-	९३
याद	-	९५
नीरव भाषण	-	९७
अनोखी भूल	-	१०१
आँसू की माला	-	१०३
फूल	-	१०६
खोज	-	१०९
जो तुम आ जाते एक बार	-	१११
परिचय	-	११२

नीहार

विसर्जन

निशा की, धो देता राकेश
चादनी मे जब अलके खोल,
कली से कहता था मधुमास
'बता दो मधुमदिरा का मोल',

झटक जाता था पागल वात
धूल मे तुहिनकणो के हार,
सिखाने जीवन का सङ्गीत
तभी तुम आये थे इस पार।

बिछाती थी सपनो के जाल
तुम्हारी वह करुणा की कोर,
गई वह अधरो की मुस्कान
मुझे मधुमय पीडा मे बोर,

भूलती थी मै सीखे राग
बिछलते थे कर बारम्बार,
तुम्हे तब आता था करुणेश!
उन्ही मेरी भूलो पर प्यार!

गए तब से कितने युग बीत
हुए कितने दीपक निर्वाण!
नही पर मैने पाया सीख
तुम्हारा सा मनमोहन गान।

\+ + +

नही अब गाया जाता देव!
थकी अँगुली, है ढीले तार
विश्ववीणा मे अपनी आज
मिला लो यह अस्फुट झङ्कार!

१९२८ मई

मिलन

रजतकरो की मृदुल तूलिका-
से ले तुहिनविन्दु सुकुमार,
कलियो पर जब आँक रहा था
करुण कथा अपनी संसार,

तरल हृदय की उच्छ्वासे जब
भोले मेघ लुटा जाते,
अन्धकार दिन की चोटो पर
अञ्जन बरसाने आते।

मधु की बूँदो मे छलके जब
तारकलोको के शुचि फूल,
विधुर हृदय की मृदु कम्पन सा
सिहर उठा वह नीरव कूल,

मूक प्रणय से, मधुर व्यथा से,
स्वप्नलोक के से आह्वान,
वे आये चुपचाप सुनाने
तब मधुमय मुरली की तान।

चल चितवन के दूत सुना
उनके, पलमे रहस्य की बात,
मेरे निर्निमेष पलको मे
मचा गए क्या क्या उत्पात!

जीवन है उन्माद तभी से
निधियां प्राणो के छाले,
माग रहा है विपुल वेदना-
के मन प्याले पर प्याले!

पीड़ा का साम्राज्य बस गया
उस दिन दूर क्षितिज के पार,
मिटना था निर्वाण जहा
नीरव रोदन था पहरेदार।

\+ + +

कैसे कहती हो सपना है
अलि! उस मूकमिलन की बात?
भरे हुए अबतक फूलो मे
मेरे आँसू उनके हास!

१६२६ अप्रैल

अतिथि से

वनबाला के गीतो सा
निर्जन मे बिखरा है मधुमास,
इन कुञ्जो मे खोज रहा है
सूना कोना मन्द बतास।

नीरव नभ के नयनो पर
हिलती है रजनी की अलकें,
जाने किसका पंथ देखती
बिछकर फूलो की पलकें।

मधुर चाँदनी धो जाती है
खाली कलियो के प्याले,
बिखरे से हैं तार आज
मेरी वीणा के मतवाले,

पहली सी झङ्कार नही है
और नही वह मादक राग,
अतिथि! किन्तु सुनते जाओ
टूटे तारो का करुण विहाग!

१८२६ मई

मिटने का खेल

मै अनन्त पथ मे लिखती जो
सस्मित सपनो की बाते,
उनको कभी न धो पायेंगी
अपने आँसू से रात!

उड उड कर जो धूल करेगी
मेघो का नभ मे अभिषेक,
अमिट रहेगी उसके अञ्चल—
मे मेरी पीडा की रेख।

मिटने का खेल

तारो मे प्रतिविम्बित हो
मुस्कायेगी अनन्त आँखे,
होकर सीमाहीन, शून्य मे
मडरायेगी अभिलाषे।

बीणा होगी मूक बजाने—
वाला होगा अन्तर्धान,
विस्मृति के चरणो पर आकर
लोटेगे सौ सौ निर्वाण !

जब असीम से हो जायेगा
मेरी लघु सीमा का मेल,
देखोगे तुम देव ! अमरता
खेलेगी मिटने का खेल !

१६२६ मई

संसार

निश्वासो की नीड, निशा का
बन जाता जब शयनागार,
लुट जाते अभिराम छिन्न
मुक्तावलियो के बन्दनवार,

तब बुझते तारो के नीरव नयनो का यह हाहाकार,
आँसू से लिख लिख जाता है 'कितना अस्थिर है ससार'।

हँस देता जब प्रात, सुनहरे
अञ्चल मे बिखरा रोली,
लहरो की बिछलन पर जब
मचली पडती किरणे भोली,

तब कलियँ चुपचाप उठाकर पल्लव के घूघट सुकुमार,
छलकी पलको से कहती है 'कितना मादक है संसार !'

देकर सौरभ दान पवन से
कहते जब मुरझाये फूल,
'जिसके पथ मे बिछे वही
क्यो भरता इन आँखो मे धूल ?

"अब इनमे क्या सार' मधुर जब गाती भौरो की गुञ्जार,
मर्मर का रोदन कहता है 'कितना निष्ठुर है संसार !'

स्वर्ण वर्ण से दिन लिख जाता
जब अपने जीवन की हार,
गोधूली, नभ के आँगन मे
देती अगणित दीपक बार,

हँसकर तब उस पार तिमिर का कहता बढ बढ पारावार,
'बीते युग, पर बना हुआ है अब तक मतवाला ससार !'

स्वप्नलोक के फूलो से कर
अपने जीवन का निर्माण,
'अमर हमारा राज्य' सोचते
है जब मेरे पागल प्राण,

आकर तब अज्ञात देश से जाने किसकी मृदु झङ्कार,
गा जाती है करुण स्वरो मे 'कितना पागल है ससार !'

१९२९ मई

अधिकार

वे मुस्काते फूल, नही—
जिनको आता है मुरझाना,
वे तारो के दीप, नही-
जिनको भाता है बुझ जाना,

वे नीलम के मेघ, नही-
जिनको है घुल जाने की चाह,
वह अनन्त ऋतुराज, नही-
जिसने देखी जाने की राह।

वे सूने से नयन, नही—
जिनमे बनते आसू-मोती,
वह प्राणो की सेज, नही
जिसमे बेसुध पीडा रोती,

ऐसा तरा लोक, वेदना
नही, नही जिसमे अवसाद,
जलना जाना नही, नही-
जिसने जाना मिटने का स्वाद !

\+ + +

क्या अमरो का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार ?
रहने दो हे देव ! अरे
यह मेरा मिटने का अधिकार !

१९२९ मई

कौन ?

ढुलकते आँसू सा सुकुमार
बिखरते सपनो सा अज्ञात,
चुरा कर ऊषा का सिन्दूर
मुस्कराया जब मेरा प्रात,

छिपा कर लाली मे चुपचाप
सुनहला प्याला लाया कौन ?

\+ + +

हँस उठे छूकर टूटे तार
प्राण मे मँडराया उन्माद,
व्यथा मीठी ले प्यारी प्यास
सो गया बेसुध अन्तर्नाद,

घूँट मे थी साकी की साध
सुना फिर फिर जाता है कौन ?

१९२९ जुलाई

मेरा राज्य

रजनी ओढे जाती थी
झिलमिल तारो की जाली,
उसके बिखरे वैभव पर
जब रोती थी उजियाली,

शशि को छूने, मचली सी
लहरो का कर कर चुम्बन,
बेसुध तम की छाया का
तटनी करती आलिङ्गन।

अपनी जब करुण कहानी
कह जाता है मलयानिल,
आँसू से भर जाता जब—
सूखा अवनी का अञ्चल,

पल्लव के डाल हिंडोले
सौरभ सोता कलियो मे,
छिप छिप किरणे आती जब
मधु से सीची गलियो मे।

आँखो मे रात बिता जब
विधु ने पीला मुख फेरा,
आया फिर चित्र बनाने
प्राची मे प्रात चितेरा,

कन कन मे जब छाई थी
वह नवयौवन की लाली,
मै निर्धन तब आई ले
सपनो से भर कर डाली।

जिन चरणो की नखज्योती-
ने हीरकजाल लजाये,
उन पर मैने धुँधले से
आँसू दो चार चढाये ।

इन ललचाई पलको पर
पहरा जब था व्रीडा का,
साम्राज्य मुझे द डाला
उस चितवन ने पीडा का ॥

उस साने के सपने को
देखे कितने युग बीते ।
आँखो के कोष हुए है
मोती बरसा कर रीते ,

अपने इस सूनेपन की
मै हूँ रानी मतवाली,
प्राणो का दीप जला कर
करती रहती दीवाली ।

मेरा राज्य

मेरी आहे सोती है
इन ओठो की ओटो मे,
मेरा सर्वस्व छिपा है
इन दीवानी चोटो मे !!

चिन्ता क्या है, हे निमर्म !
बुझ जाये दीपक मेरा,
हो जायेगा तेरा ही
पीडा का राज्य अँधेरा !

१९२८ जुलाई

चाह

चाहता है यह पागल प्यार,
अनोखा एक नया ससार !

कलियो के उच्छ्वास शून्य मे ताने एक वितान,
तुहिनकणो पर मृदु कम्पन से सेज बिछादे गान .

जहाँ सपने हो पहरेदार,
अनोखा एक नया ससार !

करते हो आलोक जहाँ बुझ बुझ कर कोमल प्राण,
जलने मे विश्राम जहा मिटने मे हो निर्वाण,

वेदना मधुमदिरा की धार,
अनोखा एक नया ससार !

मिल जाव उस पार क्षितिज के सीमा सीमाहीन,
गर्वीले नक्षत्र धरा पर लोट हो कर दीन ।

उदधि हो नभ का शयनागार,
अनोखा एक नया ससार !

जीवन की अनुभूति तुला पर अरमानो से तोल,
यह अबोध मन मूक व्यथा से ले पागलपन मोल ।

करे दृग आसू का व्यापार,
अनोखा एक नया ससार !

१९२९ जुलाई

सूनापन

मिल जाता काले अंजन मे
सन्ध्या की आँखो का राग,
जब तारे फैला फैला कर
सूने मे गिनता आकाश,

उसकी खोई सी चाहो मे
घुट कर मूक हुई आहो मे।

झूम झूम कर मतवाली सी
पिये वेदनाओ का प्याला,
प्राणो मे रूँधी निश्वासें
आती ले मेघो की माला,

उसके रह रह कर रोने मे
मिल कर विद्युत के खोने मे!

धीरे से सूने आगन मे
फैला जब जाती हैं रातें,
भर भरके ठंढी साँसो मे
मोती से आँसू की पाते,

उनकी सिहराई कम्पन मे
किरणो के प्यासे चुम्बन मे!

जाने किस बीते जीवन का
संदेशा दे मद समीरण,
छू देता अपने पखो से
मुर्झाये फूलो के लोचन,

उनके फीके मुस्काने मे
फिर अलसाकर गिर जाने मे !

आँखो की नीरव भिक्षा मे
आँसू के मिटते दागो मे,
ओठो की हँसती पीडा मे
आहो के बिखरे त्यागो मे,

कन कन मे बिखरा है निमर्म !
मेरे मानस का सूनापन !

१९२९ सितम्बर

सन्देह

बहती जिस नक्षत्रलोक मे
निद्रा के श्वासो से वात,
रजतरश्मियो के तारो पर
बेसुध सी गाती थी रात।

अलसाती थी लहरें पी कर
मधुमिश्रित तारो की ओस,
भरती थी सपने गिन गिन कर
मूक व्यथाये अपने कोष।

दूर उन्हीं नीलमकूलो पर
पीडा का ले झीना तार,
उच्छ्वासो की गूँथी माला
मैं ने पाई थी उपहार।

यह विस्मृति है या सपना वह
या जीवन विनिमय की भूल!
काले क्यो पड़ते जाते हैं
माला के सोने से फूल?

१९२९ जनवरी

निर्वाण

घायल मन लेकर सोजाती
मेघो मे तारो की प्यास,
यह जीवन का ज्वार शून्य का
करता है बढ कर उपहास।

चल चपला के दीप जलाकर
किसे ढूढता अन्धाकार ?
अपने आँसू आज पिलादो
कहता किन से पारावार ?

झुक झुक झूम झूम कर लहर
भरती बूँदों के मोती,
यह मेरे सपनो की छाया
झोंको मे फिरती रोती,

आज किसी के मसले तारों
की वह दूरागत झङ्कार,
मुझे बुलाती है सहमी सी
झञ्झा के परदो के पार।

इस असीम तम मे मिलकर
मुझको पलभर सो जाने दो,
बुझ जाने दो देव! आज
मेरा दीपक बुझ जाने दो!

१९२९ मई

समाधि के दीप से

जिन नयनों की विपुल नीलिमा—
मे मिलता नभ का आभास,
जिनका सीमित उर करता था
सीमाहीनो का उपहास,
जिस मानस मे डूब गए—
कितनी करुणा कितने तूफान!
लोट रहा है आज धूल मे
उन मतवालो का अभिमान!

जिन अधरो की मन्द हँसी थी
नव अरुणोदय का उपमान,
किया दैव ने जिन प्राणो का
केवल सुषमा से निर्माण,
तुहिनविन्दु सा, मञ्जु सुमन सा
जिन का जीवन था सुकुमार
दिया उन्हे भी निठर काल ने
पाषाणो का शयनागार ।

\+ + +

कन कन मे बिखरी सोती है
अब उनके जीवन की प्यास,
जगा न दे हे दीप ! कही—
उसको तेरा यह क्षीण प्रकाश ।

अभिमान

छाया की आँखमिचौनी
मेघो का मतवालापन,
रजनी के श्यामकपोलो
पर ढरकीले श्रम के कन ,

फूलो की मीठी चितवन
नभ की ये दीपावलियाँ,
पीले मुख पर सन्ध्या के
वे किरणो की फुलझडियाँ ।

[illegible] चाँदी की थाली
मादक मकरन्द भरी सी,
जिस मे उजियारी राते
लुटती घुलती मिसरी सी ,

भिक्षुक से फिर जाओगे
जब लेकर यह अपना धन,
करुणामय तब समझोगे
इन प्राणो का महगापन !

क्यो आज दिये देते हो
अपना मरकत सिहासन ?
यह है मेरे मरु मानस-
का चमकीला सिकताकन।

आलोक यहा लुटता
बुझ जाते है तारागण,
अविराम जलाकरता है
पर मेरा दीपक सा मन !

जिसकी विशाल छाया मे
जग बालक सा सोता है,
मेरी आँखो मे वह दु ख
आँसू बन कर खाता है !

जग हँसकर कह दता है
मेरी आँखे है निर्धन,
इनके बरसाये मोती
क्या वह अबतक पाया गिन?

मेरी लघुता ! पर आती
जिस दिव्य लोक को व्रीडा,
उसके प्राणो से पूछो
वे पाल सकेगे पीडा ?

उनसे कैसे छोटा है
मेरा यह भिक्षुक जीवन ?
उन मे अनन्त करुणा है
इस मे असीम सूनापन !

१९२९ जनवरी

उस पार

घोर तम छाया चारो ओर
घटाये घिर आई घन घोर,
वेग मारुत का है प्रतिकूल
हिले जाते है पर्वतमूल,
गरजता सागर बारम्बार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

तरङ्गे उठी पर्वताकार
भयकर करती हाहाकार,
अरे उनके फेनिल उच्छवास
तरी का करते है उपहास,
हाथ से गई छूट पतवार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

ग्रास करने नौका, स्वच्छन्द
घूमते फिरते जलचर वृन्द,
देख कर काला सिन्धु अनन्त
हो गया हा साहस का अन्त !
तरङ्गे है उत्ताल अपार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

बुझ गया वह नक्षत्र प्रकाश
चमकती जिस मे मेरी आश,
रैन बोली सज कृष्ण दुकूल
विसर्जन करो मनोरथ फूल,
न लाये कोई कर्णाधार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

सुना था मैं ने इस के पार
बसा है सोने का ससार,
जहाँ के हसते विहग ललाम
मृत्यु छाया का सुनकर नाम !
धरा का है अनन्त शृगार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

जहाँ के निर्झर नीरव गान
सुना करते अमरत्व प्रदान,
सुनाता नभ अनन्त झङ्कार
बजा देता है सारे तार,
भरा जिसमे असीम सा प्यार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

पुष्प मे है अनन्त मुस्कान
त्याग का है मारुत मे गान,
सभी मे है स्वर्गीय विकाश
वही कोमल कमनीय प्रकाश,
दूर कितना है वह ससार !
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

× × × ×

सुनायी किसने पल मे आन
कान मे मधुमय मोहक तान ?
'तरी को ले जाओ मझधार
डूब कर हो जाओगे पार,
विसर्जन ही है कर्णधार,
वही पहुँचा देगा उस पार।'

१९२४ जुलाई

मेरी साध

थकी पलके सपनो पर डाल
व्यथा मे सोता हो आकाश,
छलकता जाता हो चुपचाप
बादलो के उर से अवसाद ,

वेदना की वीणा पर देव
शून्य गाता हो नीरव राग,
मिलाकर निश्वासो के तार
गूँथती हो जब तारे रात ,

उन्ही तारक फूलो मे देव
गूँथना मेरे पागल प्राण—
हठीले मेरे छोटे प्राण !

किसी जीवन की मीठी याद
लुटाता हो मतवाला प्रात,
कली अलसाई आंखे खोल
सुनाती हो सपने की बात ,

खोजते हो खोया उन्माद
मन्द मलयानिल के उच्छ्वास,
मागती हो आसू के विन्दु
मूक फूलो की सोती प्यास ,
पिला देना धीरे से देव
उसे मेरे आसू सुकुमार–
सजीले से आसू के हार !

मचलते उद्गारो से खेल
उलझते हो किरणो के जाल,
किसी की छूकर ठंढी सास
सिहर जाती हो लहरे बाल ,

चकित सा सूने मे ससार
गिन रहा हो प्राणो के दाग,

सुनहली प्याली मे दिनमान
किसी का पीता हो अनुराग ,
ढाल देना उसमे अनजान
देव मेरा चिर सचित राग–
अरे यह मेरा मादक राग !

मत्त हो स्वप्निल हाला ढाल
महानिद्रा मे पारावार,
उसी की धडकन मे तूफान
मिलाता हो अपनी झकार ,

झकोरो से मोहक सदेश
कह रहा हो छाया का मौन,
सुप्त आहो का दीन विषाद
पूछता हो आता है कौन ?
बहा देना आकर चुपचाप
तभी यह मेरा जीवन फूल–
सुभग मेरा मुरझाया फूल !

१९२९ जनवरी

स्वप्न

इन हीरक से तारो को
कर चूर बनाया प्याला
पीडा का सार मिला कर
प्राणो का आसव ढाला।
मलयानिल के झोको मे
अपना उपहार लपेटे,
मै सूने तट पर आई
बिखरे उद्गार समेटे।
काले रजनी अञ्चल मे
लिपटी लहरे सोती थी,
मधु मानस का बरसाती
वारिदमाला रोती थी।
नीरव तम की छाया मे
छिप सौरभ की अलको मे,

गायक वह गान तुम्हारा
आ मडराया पलको मे।
हाला सी, हालाहल सी,
बह गई अचानक लहरी,
डूबा जग भूला तन मन
आँखे शिथिलाई सिहरी।
बेसुध से प्राण हुए जब
छूकर उन झङ्कारो को,
उडते थे, अकुलाते थे
चुम्बन करने तारो को।
उस मतवाली वीणा से
जब मानस था मतवाला,
वे मूक हुई झङ्कारे
वह चूर हो गया प्याला।
होगई कहा अन्तर्हित
सपने ले कर वे राते?
जिनका पथ आलोकित कर
बुझने जाती है आखे।

१९२८ मई

आना

जो मुखरित कर जाती थी
मेरा नीरव आवाहन,
मै ने दुर्बल प्राणो की
वह आज सुलादी कम्पन !

थिरकन अपनी पुतली की
भारी पलको मे बाँधी,
निस्पन्द पडी है आखे
बरसाने वाली आँधी ।

जिसके निष्फल जीवन ने
जल जल कर देखी राहे,
निर्वाण हुआ है देखो
वह दीप लुटा कर चाहे !

निर्घोष घटाओ मे छिप
तडपन चपला की सोती,
झझा के उन्मादो मे
घुलती जाती बेहोशी ।

करुणामय को भाता है
तमके परदो मे आना,
हे नभ की दीपावलियो !
तुम पल भर को बुझ जाना !

१९२९ फरवरी

निश्चय

कितनी रातो की मैने
नहलाई है अधियारी,
धोडाली है सध्या के
पीले सेदुर से लाली,

नभ के धुधले कर डाले
अपलक चमकीले तारे,
इन आहो पर तैरा कर
रजनीकर पार उतारे ।

वह गई क्षितिज की रेखा
मिलती है कही न हेरे,
भूला सा मत्त समीरण
पागल सा देता फेरे।

अपने उर पर सोने से
लिखकर कुछ प्रेम कहानी,
सहते है रोते बादल
तूफानो की मनमानी।

इन बूदो के दर्पण मे
करुणा क्या झाक रही है?
क्या सागर की धडकन मे
लहरे बढ आँक रही है?

पीडा मेरे मानस से
भीगे पट सी लिपटी है,
डूबी सी यह निश्वासे
ओठो मे आ सिमटी है।

मुझ मे विक्षिप्त झकोरे।
उन्माद मिला दो अपना,
हा नाच उठे जिसको छू
मेरा नन्हा सा सपना ॥

पीडा टकरा कर फूटे
घूमे विश्राम विकल सा,
तम बढे मिटा डाले सब
जीवन कापे चलदल सा।

फिर भी इस पार न आवे
जो मेरा नाविक निर्मम,
सपनो से बाध डुबाना
मेरा छोटा सा जीवन।

१९२८ सितम्बर

अनुरोध

इस मे अतीत सुरझाता
अपने आसू की लडिया,
इस मे असीम गिनता है
वे मधुमासो की घड़िया,
इस अञ्चल मे चित्रित है
भूली जीवन की हारै,
उनकी छलनामय छाया
मेरी अनन्त मनुहारै ।

वे निर्धन के दीपक सी,
बुझती सी मूक व्यथाये,
पाणो की चित्रपटी मे
ऑकी सी करुण कथाये,
मेरे अनन्त जीवन का
वह मतवाला बालकपन,
इस मे थक कर सोता है
ले कर अपना चञ्चल मन।

\+ + +

ठहरो बेसुध पीडा को
मेरी न कही छू लेना।
जब तक वे आ न जगावै
बस सोती रहने देना ॥

१९२९ मई

तब

शून्य से टकरा कर सुकुमार
करेगी पीडा हाहाकार,
बिखर कर कन कन मे हो व्याप्त
मेघ बन छा लेगी ससार।

पिघलते होगे यह नक्षत्र
अनिल की जब छूकर निश्वास,
निशा के आंसू मे प्रतिबिम्ब
देख निज कापेगा आकाश।

तब

विश्व होगा पीडा का राग
निराशा जब होगी वरदान,
साथ लेकर मुर्झाई साध
बिखर जायेंगे प्यासे प्राण।

उदधि नभ को कर लेगा प्यार
मिलेंगे सीमा और अनन्त,
उपासक ही होगा आराध्य
एक होंगे पतझार वसन्त।

बुझेगा जलकर आशादीप
सुला देगा आकर उन्माद,
कहा कब देखा था वह देश ?
अतल मे डूबेगी यह याद।

प्रतीक्षा मे मतवाले नैन
उड़ेंगे जब सौरभ के साथ,
हृदय होगा नीरव अम्लान
मिलोगे क्या तब हे अज्ञात ?

१९२८ जनवरी

मुर्झाया फूल

था कली के रूप शैशव–
मे अहो सूखे सुमन!
हास्य करता था, खिलाती
अक मे तुझको पवन।

खिल गया जब पूर्ण तू–
मञ्जुल सुकोमल पुष्पवर!
लुब्ध मधु के हेतु मडराते
लगे आने भ्रमर।

स्निग्ध किरणे चन्द्र की—
तुझको हँसाती थी सदा,
रात तुझ पर वारती थी
मोतियो की सम्पदा।

लोरिया गाकर मधुप
निद्रा विवश करते तुझे,
यत्न माली का रहा—
आनन्द से भरता तुझे।

कर रहा अटखेलियां—
इतरा सदा उद्यान मे,
अन्त का यह दृश्य आया—
था कभी क्या ध्यान मे ?

सो रहा अब तू धरा पर—
शुष्क बिखराया हुआ,
गन्ध कोमलता नहीं
मुख मजु मुरझाया हुआ।

आज तुझको देखकर
चाहक भ्रमर धाता नहीं,
लाल अपना राग तुझ पर
प्रात बरसाता नहीं।

जिस पवन ने अङ्क मे—
ले प्यार था तुझ को किया,
तीव्र झोके से सुला–
उसने तुझे भूपर दिया।

कर दिया मधु और सौरभ
दान सारा एक दिन,
किन्तु रोता कौन है
तेरे लिए दानी सुमन ?

मत व्यथित हो फूल ! किस को
सुख दिया ससार ने ?
स्वार्थमय सबको बनाया–
है यहा करतार ने।

मुर्झाया फूल

विश्व मे हे फूल ! तू–
सब के हृदय भाता रहा !
दान कर सर्वस्व फिर भी–
हाय हर्षाता रहा ।

जब न तेरी ही दशा पर
दुख हुआ ससार को,
कौन रोयेगा सुमन !
हम से मनुज नि सार को ?

१९२३ जनवरी

कहाँ ?

घोर घन की अवगुण्ठन डाल
करुण सा क्या गाती है रात ?
दूर छूटा वह परिचित कूल
कह रहा है यह झञ्झावात,
लिए जाते तरिणी किस ओर
अरे मेरे नाविक नादान !

हो गया विस्मृत मानवलोक
हुए जाते है बेसुध प्राण,
किन्तु तेरा नीरव सगीत
निरन्तर करता है अह्वान,
यही क्या है अनन्त की राह
अरे मेरे नाविक नादान ?

१९२६ मार्च

उत्तर

इस एक बूँद आँसू मे
चाहे साम्राज्य बहा दो,
वरदानो की वर्षा से
यह सूनापन बिखरा दो,
इच्छाओ की कम्पन से
सोता एकान्त जगा दो,
आशा की मुस्काहट पर
मेरा नैराश्य लुटा दो।

चाहे जर्जर तारो मे
अपना मानस उलझा दो,
इन पलको के प्यालो मे
सुख का आसव छलका दो,
मेरे बिखरे प्राणो मे
सारी करुणा ढुलका दो,
मेरी छोटी सीमा मे
अपना अस्तित्व मिटा दो!
पर शेष नही होगी यह
मेरे प्राणो की क्रीडा,
तुमको पीडा मे ढूँढा
तुम मे ढूँढूँगी पीडा!

१९२९ फरवरी

फिर एकबार

मैं कम्पन हूँ तू करुण राग
मैं आसू हूँ तू है विषाद,
मैं मदिरा तू उसका खुमार
मैं छाया तू उसका अधार,
मेरे भारत मेरे विशाल
मुझको कह लेने दो उदार!
फिर एकबार बस एकबार!

जिनसे कहती बीती बहार
'मतवालो जीवन है असार'।
जिन झकारो के मधुर गान
ले गया छीन कोई अजान,
उन तारो पर बनकर विहाग
मडरा लेने दो हे उदार!
फिर एकबार बस एकबार!

कहता है जिनका व्यथित मौन
'हम सा निष्फल है आज कौन'?
निर्धन के धन सी हास रेख
जिनकी जग ने पाई न देख,
उन सूखे ओठो के विषाद–
मे मिल जाने दो हे उदार!
फिर एकबार बस एकबार!

जिन आँखो का नीरव अतीत
कहता 'मिटना है मधुर जीत',
जिन पलको मे तारे अमोल
आसू से करते है किलोल,

उस चिन्तित चितवनमे विहास
बन जाने दो मुझको उदार !
फिर एकबार बस एकबार !

फूलो सी हो पलमे मलीन
तारो सी सूने मे विलीन,
ढुलती बूँदो से ले विराग
दीपक से जलने का सुहाग,
अन्तरतम की छाया समेट
मै तुझमे मिट जाऊ उदार !
फिर एकबार बस एकबार !

१९२९ मई

उनका प्यार

समीरण के पल्लो मे गूँथ
लुटा डाला सौरभ का भार,
दिया, ढुलका मानस मकरन्द
मधुर अपनी स्मृति का उपहार,
अचानक हो क्यो छिन्न मलीन
लिया फूलो का जीवन छीन ?

दैव सा निष्ठुर, दु ख सा मूक
स्वप्न सा, छाया सा अनजान,
वेदना सा, तम सा गम्भीर
कहाँ से आया वह अह्वान ?
हमारी हँसती चाह समेट
लेगया कौन तुम्हे किस देश ?

छोड कर जो वीणा के तार
शून्य मे लय हो जाता राग,
विश्व छा लेती छोटी आह
प्राण का बन्दीखाना त्याग ,
नही जिसका सीमा मे अन्त
मिली है क्या वह साध अनन्त ?

ज्योति बुझ गई रह गया दीप
रही झङ्कार गया वह गान,
विरह है या अखण्ड सँयोग
शाप है या यह है वरदान ?
पूछता आकर हाहाकार
कहाँ हो ? जीवन के उस पार ?

मधुर जीवन या मुग्ध बसन्त
विधुर बन कर आती क्यो याद ?
'सुधा' वसुधा मे लाया एक
प्राण मे लाती एक विषाद ,
बुझाकर छोटा दीपालोक
हुई क्या हो असीम मे लोप ?

हुई सोने की प्रतिमा क्षार
साधनाये बैठी है मौन,
हमारा मानसकुञ्ज उजा
दे गया नीरव रोदन कौन ?
नही क्या अब होगा स्वीकार
पिघलती आँखो का उपहार ?

बिखरते स्वप्नो की तस्वीर
अधूरा प्राणो का सन्देश,
हृदय की लेकर प्यासी साध
बसाया है अब कौन विदेश ?
रो रहा है चरणो के पास
चाह जिनकी थी उनका प्यार ।

१९२८ मई

आँसू

यही है वह विस्मृत सङ्गात
खोगई है जिसकी झङ्कार,
यही सोते है वे उच्छ्वास
जहा रोता बीता ससार,
यही है प्राणो का इतिहास
यही बिखरे वसन्त का शेष,
नही जो अब आयेगा लौट
यही उसकी अक्षय सदेश।

\+ + + +

समाहित है अनन्त अह्वान
यही मेरे जीवन का सार,
अतिथि! क्या ले जाओगे साथ
मुग्ध मेरे आँसू दो चार?

१९२८ अप्रेल

मेरा एकान्त

कामना की पलकों में झूल
नवल फूलों के छूकर अङ्ग,
लिए मतवाला सौरभ साथ
लजीली लतिकाये भर अङ्क,
यहां मत आओ मत्त समीर!
सो रहा है मेरा एकान्त!

लालसा की मदिरा मे चूर
क्षणिक भङ्गुर यौवन पर भूल,
साथ लेकर भौरो की भीर
विलासी हे उपवन के फूल!
बनाओ इसे न लीलाभूमि
तपोवन है मेरा एकान्त!

निराली कलकल मे अभिराम
मिलाकर मोहक मादक गान,
छलकती लहरो मे उद्दाम
छिपा अपना अस्फुट अज्ञान,
न कर हे निर्झर! भङ्ग समाधि
साधना है मेरा एकान्त!

विजन वन मे बिखरा कर राग
जगा सोते प्राणो की प्यास,
ढालकर सौरभ मे उन्माद
नशीली फैला कर निश्वास,
लुभाओ इसे न मुग्ध वसन्त!
विरागी है मेरा एकान्त!

गुलाबी चल चितवन मे बोर
सजीले सपनो की मुस्कान,
झिलमिलाती अवगुण्ठन डाल
सुनाकर परिचित भूली तान,
जला मत अपना दीपक आश !
न खो जाये मेरा एकान्त !

१९२७ अगस्त

उनसे

निराशा के झोंकों ने देव !
भरी मानसकुंजों में धूल,
वेदनाओं के झञ्झावात
गए बिखरा यह जीवनफूल ।

बरसते थे मोती अवदात
जहा तारकलोकों से टूट,
जहाँ छिप जाते थे मधुमास
निशा के अभिसारों को लूट ।

जला जिसमे आशा के दीप
तुम्हारी करती थी मनुहार,
हुआ वह उच्छ्वासो का नीड
रुदन का सूना स्वप्नागार।

\+ + +

हृदय पर अङ्कित कर सुकुमार
तुम्हारी अवहेला की चोट,
बिछाती हूँ पथ मे करुणेश!
छलकती आँखे हँसते ओठ।

१९२९ मई

मेरा जीवन

स्वर्ग का था नीरव उच्छ्वास
देव वीणा का टूटा तार,
मृत्यु का क्षणभगुर उपहार
रत्न वह प्राणो का शृगार,
नई आशाओ का उपवन
मधुर वह था मेरा जीवन !

क्षीरनिधि की थी सुप्त तरङ्ग
सरलता का न्यारा निर्झर,
हमारा वह सोने का स्वप्न
प्रेम की चमकीली आकर,
शुभ्र जो था निर्मेघ गगन
सुभग मेरा मगी जीवन!

अलक्षित आ किसने चुपचाप
सुना अपनी सम्मोहन तान,
दिखाकर माया का साम्राज्य
बना डाला इसको अज्ञान?
मोह मदिरा का आस्वादन
किया क्यो हे भोले जीवन!

तुम्हे ठुकरा जाता नैराश्य
हँसा जाती है तुमको आश,
नचाता मायावी ससार
लुभा जाता सपनो का हास,
मानते विष को सजीवन
मुग्ध मेरे भूले जीवन!

न रहता भौरो का अह्वान
नही रहता फूलो का राज्य,
कोकिला होती अन्तर्ध्यान
चला जाता प्यारा ऋतुराज,
असम्भव है चिर सम्मेलन,
न भूला क्षणभगुर जीवन!

विकसते मुरझाने को फूल
उदय होता छिपने को चन्द,
शून्य होने को भरते मेघ
दीप जलता होने को मन्द,
यहा किसका अनन्त यौवन?
अरे अस्थिर छोटे जीवन!

छलकती जाती है दिन रैन
लबालब तेरी प्याली मीत,
ज्योति होती जाती है क्षीण
मौन होता जाता सगीत,
करो नयनो का उन्मीलन
क्षणिक हे मतवाले जीवन!

शून्य से बन जाओ गम्भीर
त्याग की हो जाओ भङ्कार,
इसी छोटे प्याले मे आज
डुबा डालो सारा ससार,
लजा जाये यह मुग्ध सुमन
बनो ऐसे छोटे जीवन!

सखे! यह है माया का देश
क्षणिक् है मेरा तेरा सङ्ग,
यहा मिलता काटो मे बन्धु!
सजीला सा फूलो का रङ्ग,
तुम्हे करना विच्छेद सहन
न भूलो हे प्यारे जीवन!

१६२७ फरवरी

सूना संदेश

हुए हैं कितने अन्तर्ध्यान
छिन्न होकर भावो के हार,
घिरे घन से कितने उच्छ्वास
उडे है नभ मे होकर क्षार।

शून्य को छूकर आये लौट
मूक होकर मेरे निश्वास,
बिखरती है पीडा के साथ
चूर होकर मेरी अभिलाष।

छा रही है बनकर उन्माद
कभी जो थी अस्फुट झंकार,
कांपता सा आंसू का विन्दु
बना जाता है पारावार।

खोज जिसकी वह है अज्ञात
शून्य वह है भेजा जिस देश,
लिए जाओ अनन्त के पार
प्राण वाहक सूना सदेश।

१९२८ मार्च

प्रतीक्षा

जिस दिन नीरव तारो से,
बोली किरणो की अलके,
'सो जाओ अलसाई है
सुकुमार तुम्हारी पलके।'

ज ब इन फूलो पर मधु की
पहली बूदे बिखरी थी,
आँख पकज की देखी
रवि ने मनुहार भरी सी।

दीपकमय कर डाला जब
जलकर पतङ्ग ने जीवन,
सीखा बालक मेघो ने
नभ के आगन मे रोदन,

उजियारी अवगुण्ठन मे
विधु ने रजनी को देखा,
तब से मै ढूँढ रही हूँ
उनके चरणो की रेखा ।

मैं फूलो मे रोती वे
बालारुण मे मुस्काते,
मैं पथ मे बिछ जाती हूँ
वे सौरभ मे उड जाते ।

वे कहते है उनको मै
अपनी पुतली में देखूँ,
यह कौन बता जायेगा
किसमें पुतली को देखूँ ?

मेरी पलको पर राते
बरसाकर मोती सारे,
कहती 'क्या देख रहे है
अविराम तुम्हारे तारे' ?

तम ने इन पर अजन से
बुन बुन कर चादर तानी,
इन पर प्रभात ने फेरा
आकर सोने का पानी।

इन पर सौरभ की सांसे
लुट लुट जाती दीवानी,
यह पानी मे बैठी है
बन स्वप्न लोक की रानी।

कितनी बीती पतझारें
कितने मधु के दिन आये,
मेरी मधुमय पीडा को
कोई पर ढूढ न पाये।

प्रतीक्षा

झिप झिप आँखे कहती हैं
यह कैसी है अनहोनी ?
हम और नही खेलेगी
उनसे यह आँखमिचौनी।

अपने जर्जर अञ्चल मे
भरकर सपनो की माया,
इन थके हुए प्राणो पर
छाई विस्मृति की छाया !

\+ + +

मेरे जीवन की जाग्रति !
देखो फिर भूल न जाना,
जो वे सपना बन आवे
तुम चिरनिद्रा बन जाना !

१६२६ अप्रेल

विस्मृति

जहां है निद्रामग्न वसन्त
तुम्ही हो वह सूखा उद्यान,
तुम्ही हो नीरवता का राज्य
जहा खोया प्राणो ने गान,

निराली सी आंसू की बूद
छिपा जिसमे असीम अवसाद,
हलाहल या मदिरा का घूट
डुबा जिसने डाला उन्माद।

जहां बन्दी मुरझाया फूल
कली की हो ऐसी मुस्कान,
ओसकन का छोटा आकार
छिपा जो लेता है तूफान,

जहा रोता है मौन अतीत
सखो! तुम हो ऐसी झङ्कार,
जहा बनती अलोक समाधि
तुम्ही हो ऐसा अन्धाकार।

जहा मानस के रत्न विलीन
तुम्ही हो ऐसा पारावार,
अपरचिति हो जाता है मीत
तुम्ही हो ऐसा अञ्जन सार!

मिटा देता आसू के दाग
तुम्हारा यह सोने सा रङ्ग,
डुबा देती बीता ससार
तुम्हारी यह निस्तब्ध तरङ्ग।

भस्म जिसमे हो जाता काल
तुम्ही वह प्राणो का सन्यास,
लेखनी हो ऐसी विपरीत
मिटा जो जाती है इतिहास ,

साधनाओ का दे उपहार
तुम्हे पाया है मैने अन्त,
लुटा अपना सीमित ऐश्वर्य्य
मिला है यह वैराग्य अनन्त।

\+ + +

भुला डालो जीवन की साध
मिटा डालो बीते का लेश,
एक रहने देना यह ध्यान
क्षणिक ह यह मेरा परदेश !

१९२७ फरवरी

अनन्त की ओर

गरजता सागर तम है घोर
घटा घिर आई सूना तीर,
अंधेरी सी रजनी मे पार
बुलाते हो कैसे बेपीर ?

नही है तरिणी कर्णधार
अपरिचित है वह तेरा देश,
साथ है मेरे निर्मम देव !
एक बस तेरा ही सदेश ।

\+ + +

हाथ मे लेकर जर्जर बीन
इन्ही बिखरे तारो को जोर,
लिए कैसे पीडा का भार
देव आऊँ अनन्त की ओर ?

१८२८ मई

स्मारक

झूमते से सौरभ के साथ
लिए मिटते स्वप्नो का हार,
मधुर जो सोने का सगीत
जा रहा है जीवन के पार,
तुम्ही अपने प्राणो मे मौन
बाध लेते उसकी झङ्कार।

काल की लहरो मे अविराम
बुलबुले होते अन्तर्धान,
हाय उनका छोटा ऐश्वर्य्य
डूबता लेकर प्यासे प्राण,
समाहित हो जाती वह याद
हृदय मे तेरे हे पाषाण!

पिघलती आँखो के सदेश
आसुओ के वे पारावार,
भग्न आशाओ के अवशेष
जली अभिलाषाओ के क्षार,
मिलाकर उच्छ्वासो की धूलि
रगाई है तूने तस्वीर!

गूँथ बिखरे सूखे अनुराग
बीन करके प्राणो के दान,
मिले रज मे सपनो को ढूँढ
खोज कर वे भूले अज्ञान,
अनोखे से माली निर्जीव
बनाई है आसू की माल!

मिटा जिनको जाता है काल
अमिट करते हो उनकी याद,
डुबा देता जिसको तूफान
अमर कर देते हो वह साध,
मूक जो हो जाती है चाह
तुम्ही उसका देते सदेश।

राख मे सोने का सम्राज्य
शून्य मे रखते हो सगीत,
धूल से लिखते हो इतिहास
विन्दु मे भरते हो वारीश,
तुम्ही मे रहता मूक वसन्त
अरे सूखे फूलो के हास!

१८२७ नवम्बर

मोल

झिलमिल तारो की पलको मे
स्वप्निल मुस्कानो को ढाल,
मधुर वेदनाओ से भर के
मेघो के छायामय थाल,

रग डाले अपनी लाली मे
गूँथ नये ओसो के हार,
विजन विपिन मे आज बावली
बिखराती हो क्यो शृगार ?

मोल

फूलो के उच्छ्वास बिछाकर
फैला फैला स्वर्ण पराग,
विस्मृति सी तुम मादकता सी
गाती हो मदिरा सा राग,

जीवन का मधु बेच रही हो
मतवाली आँखो मे घोल
क्या लोगी ? क्या कहा सजनि
'इसका दुखिया आसू है मोल'।

१९२९ जनवरी

दीप

मूक करके मानस का ताप
सुलाकर वह सारा उन्माद,
जलाना प्राणो को चुपचाप
छिपाये रोता अन्तर्नाद,
कहा सीखी यह अद्भुत प्रीति?
मुग्ध हे मेरे छोटे दीप!

चुराया अन्तस्तल मे भेद
नही तुमको वाणी की चाह,
भस्म होते जाते है प्राण
नही मुखपर आती है आह,
मौन मे सोता है सङ्गीत—
लजीले मेरे छोटे दीप!

क्षार होता जाता है गात
वेदनाओ का होता अन्त,
किन्तु करते रहते हो मौन
प्रतीक्षा का आलोकित पन्थ,
सिखादो ना नेही की रीति—
अनोखे मेरे नेही दीप!
पडी है पीडा सज्ञाहीन
साधना मे डूबा उद्गार,
ज्वाल मे बैठा हो निस्तब्ध
स्वर्ण बनता जाता है प्यार,
चिता है तेरी प्यारी मीत—
वियोगी मेरे बुझते दीप!
अनोखे से नेही के त्याग!
निराले पीडा के ससार!
कहा होते हो अन्तर्ध्यान
लुटा अपना सोने सा प्यार?
कभी आयेगा ध्यान अतीत—
तुम्हे क्या निर्वाणोन्मुख दीप?

१९२७ नवम्बर

वरदान

तरल आसू की लडियां गूँथ
इन्ही ने काटी काली रात,
निराशा का सूना निर्माल्य
चढाकर देखा फीका प्रात।

इन्ही पलको ने कटक हीन
किया था वह मारग बेपीर,
जहा से छूकर तेरे अङ्ग
कभी आता था मद समीर!

सजग लखती थी तेरी राह
सुलाकर प्राणो मे अवसाद,
पलक प्यालो से पी पी देव !
मधुर आसव सी तेरी याद ।

अशन जल का जल ही परिधान
रचा था बूँदो मे ससार,
इन्ही नीले तारो मे मुग्ध
साधना सोती थी साकार ।

आज आये हो हे करुणेश !
इन्हे जो तुम देने वरदान,
गलाकर मेरे सारे अङ्ग
करो दो आँखो का निर्माण !

*८२८ दिसम्बर

स्मृति

विस्मृति तिमिर मे दीप हो
भवितव्य का उपहार हो,
बीते हुए का स्वप्न हो
मानव हृदय का सार हो।

तुम सान्त्वना हो दैव की
तुम भाग्य का बरदान हो,
टूटी हुई झंकार हो
गतकाल की मुस्कान हो।

उस लोक का सदेश हो
इस लोक का इतिहास हो,
भूले हुए का चित्र हो
सोई व्यथा का हास हो।

अस्थिर चपल ससार मे
तुम हो प्रदर्शक सङ्गिनी,
निस्सार मानस कोष मे
हो मञ्जु हीरक की कनी।

दुर्दैव ने उर पर हमारे
चित्र जो अङ्कित किए,
देकर सजीला रङ्ग तुमने
सर्वदा रञ्जित किए,

तुम हो सुधाधारा सदा
सुखे हुए अनुराग को,
तुम जन्म देती हो सखी!
आसक्ति को वैराग्य को।

तेरे विना ससार मे
मानव हृदय स्मशान है,
तेरे बिना हे सङ्गिनी!
अनुराग का क्या मान है?

१८२६ मई

याद

निठुर होकर डालेगा पाश
इसे अब सूनेपन का भार,
गला देगा पलको मे मूद
इसे इन प्राणो का उद्गार,

खीच लेगा असीम के पार
इसे छलिया सपनो का हास,
बिखरते उच्छ्वासो के साथ
इसे बिखरा देगा नैराश्य।

सुनहरी आशाओ का छोर
बुलायेगा इसको अज्ञात,
किसी विस्मृत वीणा का राग
बना देगा इसको उद्भ्रान्त ।

\+ + +

छिपेगी प्राणो मे बन प्यास
घुलेगी आँखो मे हो राग,
कहा फिर ले जाऊँ हे देव !
तुम्हारे उपहारो की याद ?

१९२९ जुलाई

नीरव भाषण

गिरा जब हो जाती है मूक
देख भावो का पारावार,
तोलते है जब बेसुध प्राण
शून्य से करुणकथा का भार,
मौन बन जाता आकर्षण
वही मिलता नीरव भाषण।

जहा बनती पतझार वसन्त
जहा जागृति बनती उन्माद,
जहा मदिरा देती चैतन्य
भूलना बनता मीठी याद ,
जहा मानस का मुग्ध मिलन
वही मिलता नीरव भाषण ।

जहा विष देता है अमरत्व
जहा पीडा है प्यारी मीत,
अश्रु है नयनो का शृगार
जहा ज्वाला बनती नवनीत ,
मृत्यु बन जाती नवजीवन
वही रहता नीरव भाषण ।

नही जिसमे अनन्त विच्छेद
बुझा पाता जीवन की प्यास,
करुण नयनो का सचित मौन
सुनाता कुछ अतीत की बात ,
प्रतीक्षा बन जाती अजन
वही मिलता नीरव भाषण ।

पहन कर जब आसू के हार
मुस्कराती वे पुतली श्याम ,
प्राण मे तन्मयता का हास
मागता है पीडा अविराम ,
वेदना बनती सजीवन
वही मिलता नीरव भाषण ।

जहा मिलता पङ्कज का प्यार
जहा नभ मे रहता आराध्य,
ढाल देना प्राणो मे प्राण
जहा होती जीवन की साध ,
मौन बन जाता आवाहन
वही रहता नीरव भाषण ।
जहां है भावो का विनिमय
जहा इच्छाओ का सयोग,
जहा सपनो मे है अस्तित्व
कामनाओ मे रहता योग ,
महानिद्रा बनता जीवन
वही मिलता नीरव भाषण ।

जहा आशा बनती नैराश्य
राग बन जाता है उच्छ्वास,
मधुर वीणा है अन्तर्नाद
तिमिर मे मिलता दिव्य प्रकाश ,
हास बन जाता है रोदन
वही मिलता नीरव भाषण ।

१९२६

अनोखी भूल

जिन चरणो पर देव लुटाते—
थे अपने अमरो के लोक,
नखचन्द्रो की कान्ति लजाती
थी नक्षत्रो के आलोक,

रवि शशि जिन पर चढा रहे थे
अपनी आभा अपना राज,
जिन चरणो पर लोट रहे थे
सारे सुख सुषमा के साज

जिनकी रज धो धो जाता था
मेघो का मोती सा नीर,
जिनकी छबि अकित कर लेता
नभ अपना अन्तस्तल चीर,

भी भर झीने जीवन मे
इच्छाओ के रुदन अपार,
जला वेदनाओ के दीपक
आई उस मन्दिर के द्वार।

क्या देता मेरा सूनापन
उनके चरणो को उपहार ?
बेसुध सी मै धर आई
उन पर अपने जीवन की हार !

\+ + +

मधुमाते हो विहस रहे थे
जो नन्दन कानन के फूल,
हीरक बन कर चमक गई
उनके अञ्चल मे मेरी भूल !

१९२९ मई

आँसू की माला

उच्छ्वासो की छाया मे
पीडा के आलिङ्गन मे,
निश्वासो के रोदन मे
इच्छाओ के चुम्बन मे,

सूने मानस मन्दिर मे
सपनो की मुग्ध हँसी मे,
आशा के आवाहन मे
बीते की चित्रपटी मे।

उन थकी हुई सोती सी
ज्योतिष्ना की पलको मे,
बिखरी उलझी हिलती सी
मलयानिल की अलको मे,

रजनी के अभिसारो मे
नक्षत्रो के पहरो मे,
ऊषा के उपहासो मे
मुस्काती सी लहरो मे।

जो बिखर पडे निर्जन मे
निर्भर सपनो के मोती,
मै ढूँढ रही थी लेकर
धुधली जीवन की ज्योती,

उस सूने पथ मे अपने
पैरो की चाप छिपाये,
मेरे नीरव मानस मे
वे धीरे धीरे आये!

मेरी मदिरा मधुवाली
आकर सारी ढुलका दी,
हँसकर पीडा से भर दी
छोटी जीवन की प्याली,

मेरी बिखरी वीणा के
एकत्रित कर तारो को,
टूटे सुख के सपने दे
अब कहते हैं गाने को।

यह मुरझाये फूलो का
फीका सा मुस्काना है,
यह सोती सी पीडा को
सपनो से ठुकराना है,

गोधूली के ओठो पर
किरणो का बिखराना है,
यह सूखी पखडियो मे
मारुत का इठलाना है।

\+ + +

इस मीठी सी पीडा मे
डूबा जीवन का प्याला,
लिपटी सी उतराती है
केवल आँसू की माला।

१९२७ नवम्बर

फूल

मधुरिमा के, मधु के अवतार
सुधा से, सुषमा से, छबिमान,
आँसुवो मे सहमे अभिराम
तारको से हे मूक अजान !
सीखकर मुस्काने की बान
कहां आये हो कोमल प्राण ?

स्निग्ध रजनी से लेकर हास
रूप से भर कर सारे अङ्ग,
नये पल्लव का घूघट डाल
अछूता ले अपना मकरन्द,
ढूँढ पाया कैसे यह देश ?
स्वर्ग के हे मोहक सन्देश !

रजत् किरणो से नैन पखार
अनोखा ले सौरभ का भार,
छलकता लेकर मधु का कोष,
चले आये एकाकी पार,
कहो क्या आये मारग भूल ?
मञ्जु छोटे मुस्काते फूल !

उषा के छू आरक्त कपोल
किलक पडता तेरा उन्माद,
देख तारो के बुझत प्राण
न जाने क्या आ जाता याद ?
हेरती है सौरभ की हाट
कहो किस निर्मोही की बाट ?

चादनी का शृगार समेट
अधखुली आँखो की यह कोर,
लुटा अपना यौवन अनमोल
ताकती किस अतीत की ओर ?
जानते हो यह अभिनव प्यार
किसी दिन होगा कारागार ?

कौन वह है सम्मोहन राग
खीच लाया तुमको सुकुमार ?
तुम्हे भेजा जिसने इस देश
कौन वह है निष्ठुर कर्तार ?
हँसो पहनो काटो के हार
मधुर भोलेपन के ससार !

१९२७ सितम्बर

खोज

प्रथम प्रणय की सुषमा सा
यह कलियो की चितवन मे कौन ?
कहता है 'मै ने सीखा उनकी—
आँखो से सस्मित मौन'।

घूघट पट से झाक सुनाते
ऊषा के आरक्त कपाल,
'जिसकी चाह तुम्हे है उसने
छिडकी मुझ पर लाली घोल'।

कहते है नक्षत्र 'पड़ी हम पर
उस माया की झाई',
कह जाते वे मेघ 'हमी उसकी—
करुणा की परछाई'।

वे मन्थर सी लोल हिलोर
फैला अपने अञ्चल छोर,
कह जाती 'उस पार बुलाता-
है हमको तेरा चितचोर'।

यह कैसी छलना निर्मम
कैसा तेरा निष्ठुर व्यापार ?
तुम मन मे हो छिपे मुझे
भटकाता है सारा ससार।

१९२८ मई

जो तुम आ जाते एक बार

कितनी करुणा कितने संदेश
पथ मे बिछ जाते बन पराग,
गाता प्राणो का तार तार
अनुराग भरा उन्माद राग,
आँसू लेते वे पद पखार।

हँस उठते पल मे आर्द्र नैन
धुल जाता ओठो से विषाद,
छा जाता जीवन मे वसन्त
लुट जाता चिर सचित विराग,
आँखे देती सर्वस्व वार।

१९२९ नवम्बर

परिचय

जिसमे नही सुवास नही जो
करता सौरभ का व्यापार,
नही देख पाता जिसकी
मुस्कानो को निष्ठुर ससार ,

जिसके आँसू नही मागते
मधुपो से करुणा की भीख,
मदिरा का व्यवसाय नही
जिसके प्राणो ने पाया सीख

मोती बरसे नही न जिसको
छू पाया उन्मत्त बयार,
देखी जिसने हाट न जिस पर
ढुल जाता मालो का प्यार,

चढा न देवो के चरणो पर
गूँथा गया न जिसका हार,
जिसका जीवन बना न अबतक
उन्मादो का स्वप्नागार।

निर्जन वन के किसी अधेरे
कोने मे छिपकर चुपचाप,
स्वप्नलोक की मधुर कहानी
कहता सुनता अपने आप।

किसी अपरिचित डाली से
गिरकर जो निरस जंगली फूल,
फिर पथ मे बिछकर आँखो मे
चुपके से भर लेता धूल।

× × ×

उसी सुमन सा पल भर हसकर
सूने मे हो छिन्न मलीन,
झड जाने दो जीवन-माली !
मुझको रहकर परिचय हीन !

१९२९ मई

हमारी प्रकाशित पुस्तकें

वीर सतसई

रचयिता श्री वियोगी हरि। बाहु फडकाने वाले वीर रस के ७०० दोहो का एक उत्कृष्ट मौलिक ग्रथ। हिन्दी मे शृङ्गार और नीति विषयक सतसइयाँ तो थी परन्तु वीर रस की आज तक एक भी नही थी, इसका अभाव इस वीर सतसई ने पूरी की है। लेखक ने बडी ही सजीव भाषा मे भारत के भूत और वर्तमान की दशा का खाका खीचा है। जहाँ आप भूत पर गर्व करेंगे वहाँ ही वर्तमान पर आँसू बहाने पडेंगे। अपने देश का इस तरह सुन्दर चित्र खकित करना श्री वियोगी हरि जी ही ऐसे विद्वानो का काम है। पिछले वर्ष इसी पुस्तक पर अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलत ने १२००) श्रीमगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया था। पुस्तक की छपाई, कागज़ बहुत ही उत्तम है। मूल्य भी केवल १॥) ही रक्खा है। प्रथम सस्करण की थोडी सी प्रतियाँ और रह गई है। शीघ्रता कीजिये अन्यथा दूसरे सस्करण की प्रतीक्षा करनी पडेगी।

सूरसंग्रह

सग्रहकर्ता लाला भगवानदीन। इस सग्रह मे केवल १०० चुने हुये पद रक्खे गये है। जिनमे से ३५ पद विनय के, ५२ पद

कृष्ण की बाल लीला के और १३ पद कृष्ण के रूप के वर्णन के है। सभी पद ऐसे है जिनमे कि शृङ्गार रस का नाम तक नही है, जिससे इसे नि सकोच बेटी बहू सभी के हाथो मे दी जा सकती है। आरभ मे सूर की जीवनी और उनकी कविता पर आलोचना इत्यादि भी ३० पृष्ठो मे दे दी गई है। पुस्तक सजिल्द है। मूल्य १) रक्खा गया है।

झाँकी

हिन्दी अतुकान्त कविता का एक अत्युत्तम ग्रन्थ,

चार सवाद,

सीता-पार्वती, भारत राजलक्ष्मी और शिवाजी,

नूरजहाँ, चाणक्य और चन्द्रगुप्त।

ये सम्वाद बडे बडे विद्वानो द्वारा एव कई समाचार पत्रो द्वारा प्रशसित है। इसमें गठित शब्दाली, मौलिक भाव, तथा उच्च आदर्श गर्भित है। कहाँ तक प्रशसा करें, खरीदकर पढ देखिये। मूल्य १)।

पुस्तक मिलने का पता—

साहित्य-भवन लिमिटेड,

प्रयाग।